मुक्ति की ललक

'मुमुक्षुत्व'

बेन विलियम्स द्वारा लिखित व्याख्या

अपनी इस संसार-यात्रा में कभी-कभी हमें यह एहसास होता है कि मनुष्य होने का अर्थ कुछ और भी है, इस जीवन में कुछ और भी है; उससे भी अधिक जितना अभी हम समझ पा रहे हैं। और इस एहसास के साथ-साथ हममें एक अन्तर-प्रेरित समझ भी हो सकती है कि भले ही हम उन सभी रूढ़िवादी व लोकसंगत लक्ष्यों को प्राप्त कर लें जो हमने अपने लिए तय कर लिए हों, फिर भी अन्ततः हमें उससे सच्ची तृप्ति नहीं मिलेगी।

तो, आख़िर वह क्या है जिसे हम सचमुच ढूँढ़ रहे हैं? हम ऐसे सुख की तलाश में हैं जो कभी लुप्त नहीं होता। हमें ऐसी आन्तरिक स्वतन्त्रता की ललक है जो अविचल हो। हो सकता है, अन्तर की यह पुकार सूक्ष्म हो, पर यह है बहुत महत्त्वपूर्ण। यह एहसास कि जीवन में कुछ और भी है, एक शुद्ध स्पन्द है—अपने ही सच्चे स्वरूप की व्यापकता के प्रति, अपने सच्चे स्वरूप की अनन्तता के प्रति जाग्रत होने का स्पन्द।

वे सिद्ध महात्मा जो शैवदर्शन का प्रतिपादन करते हैं, कहते हैं कि यह ललक स्वयं चिति में निहित है, यह ललक उसका अन्तर्जात स्वभाव ही है। वे सिखाते हैं कि जिस क्षण सर्वव्यापी चिति सृजन का निश्चय करती है, वह इस जगतरूपी नाटक में अभिनय करने हेतु स्वेच्छा से अपनी स्वतन्त्रता और पूर्णता का त्याग करती है। इस प्रकार, चिति, एक अभिनयकर्ता की तरह अपनी ही इच्छा से, मुक्तरूप से, एक जीवात्मा की भूमिका को धारण करती है। जन्म-मरण और फिर पुनर्जन्म के अपने अनेक चक्रों से गुज़रते समय यह जीवात्मा अपने सच्चे स्वरूप की इस स्मृति को बनाए रखती है कि वह स्वयं सर्वव्यापी और आनन्दपूर्ण चिति है; यह स्मृति हृदय की गहराइयों में गुप्त या अप्रकट रूप में विद्यमान रहती है। हमारे अनन्त स्वरूप की यह स्मृति जब जाग्रत होती है तो हम उसी मूल स्वतन्त्रता और उन्मुक्त आनन्द को पुनः पाने के लिए प्रवृत्त हो उठते हैं जो समस्त प्राणियों का आधार है व उन्हें चेतन बनाता है, हम उस अद्‌भुत 'बोध' को पाने के लिए प्रवृत्त हो उठते हैं जिसमें सब कुछ एक है।

महत्त्वपूर्ण मोड़ तब आता है जब हम इस अन्तर्जात ललक के प्रति *जागरूक* हो जाते हैं, जो स्वयं उसी की एक चिंगारी है जिसके लिए हम उत्कण्ठित हैं। अन्तर की इस पुकार को संस्कृत में 'मुमुक्षुत्व' कहा जाता है यानी मोक्ष पाने की उत्कट इच्छा, परम सत्य को जानने की तीव्र लालसा।

'विवेकचूडामणि', श्रीशंकराचार्य द्वारा रचित वेदान्त-दर्शन पर एक संक्षिप्त और मर्मभेदी ग्रन्थ है जिसमें कहा गया है :

> दुर्लभं त्रयं एवैतद् देवानुग्रहहेतुकम्।
> मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुषसंश्रयः॥
>
> ये तीन चीज़ें अत्यन्त दुर्लभ हैं और केवल भगवत्कृपा [भगवान के अनुग्रह] से ही प्राप्त होती हैं : मनुष्य-जन्म, मोक्ष की ललक [मुमुक्षुत्व] और महापुरुष का आश्रय।[१]

भारत की दार्शनिक परम्पराओं में मनुष्य-जन्म को एक अतिदुर्लभ और अनुपम उपहार माना गया है क्योंकि मनुष्य में ही वह क्षमता व सामर्थ्य है कि वह चिति की निर्बाध स्वतन्त्रता के प्रति जाग्रत हो सके। और स्वतन्त्रता या मुक्ति की इसी ललक के प्रति जागरूक होना, मनुष्य-जीवन में आने वाले एक महत्त्वपूर्ण मोड़ को दर्शाता है। इन दो अपरिमित आशीर्वादों के साथ ही, दिव्य कृपा का परम कृत्य भी एक तत्त्व है जिसके द्वारा हमें सद्गुरु प्राप्त होते हैं और अन्ततः हम उनका आश्रय लेते हैं; क्योंकि ऐसे आत्मसाक्षात्कारी सद्गुरु में ही दिव्य शक्तिपात दीक्षारूपी महाप्रसाद प्रदान करने की सामर्थ्य होती है।

शक्तिपात दीक्षा सीधे, दिव्य कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करती है; तत्पश्चात् यह शक्ति श्रीगुरु की कृपा व संरक्षण में किए गए हमारे अनुशासित आध्यात्मिक अभ्यासों द्वारा उन्मीलित होती है। हमारी अन्तर-शक्ति का यह उन्मीलन या विकास, मुक्ति की ललक को तीव्र कर देता है व पथ पर हमारी उन्नति को और भी गतिशील बना देता है। इस प्रकार, एक मुमुक्षु धीरे-धीरे परिपक्व होता जाता है और आत्मा का पूर्ण ज्ञान पाने के लिए तैयार हो जाता है।

महान सिद्धों की सिखावनियाँ सतत इस ललक को पहचानने के महत्त्व का गुणगान करती हैं। गुरुमाई जी कहती हैं :

> मुमुक्षुत्व, मोक्ष को पाने का दृढ़ निश्चय है। यही वह उत्कट इच्छा है जो व्यक्ति से सत्य की खोज करवाती है। ऐसा व्यक्ति मुमुक्षु कहलाता है जो अन्तर की महानतर शक्ति को जानने के लिए, दिव्य ज्ञान को अर्जित करने हेतु स्वयं का बलिदान करने के लिए तत्पर है।
>
> एक सच्चा मुमुक्षु उन सभी अवरोधों को तोड़कर बाहर आ जाना चाहता है जो उसे उसकी सीमितताओं से जकड़े रखते हैं। मुक्ति की अविस्मरणीय ललक लिए, वह सत्य के साथ एक होने के लिए कटिबद्ध होता है। अतः लेशमात्र अहं भी उसके लिए कष्टकारी होता है। एक मुमुक्षु भगवान की इच्छा के प्रति स्वयं को समर्पित करने के लिए अथक रूप से प्रयत्नशील रहता है।
>
> मुमुक्षु बनो : महान सत्य के साथ एक होने के लिए पूर्ण हृदय से उत्कण्ठित रहो।[२]

मुमुक्षु होने का बोध इस बात का सूचक है कि हमारी साधना सहज रूप से उन्मीलित हो रही है, कि हमारा आध्यात्मिक अनुशासन फलीभूत हो रहा है। यद्यपि, यह ललक भिन्न-भिन्न मात्रा में और अलग-अलग रूपों में महसूस हो सकती है, फिर भी अकसर यह एक आन्तरिक दृढ़निश्चय के रूप में व्यक्त होती है—उन अवरोधों को तोड़ देने का दृढ़निश्चय जो हमें सीमित कर देते हैं तथा प्रज्ञान, करुणा, अभय और महान स्वतन्त्रता के साथ जीने का दृढ़निश्चय। मोक्ष के लिए एक शुद्ध हृदय के साथ किया गया समर्पण ही हमारे लिए अचूक, सही दिशा को निर्धारित करता है जिससे हमें अपनी भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रेरणाओं का सन्दर्भ या उद्देश्य स्पष्टता से समझ में आता है, और इसके फलस्वरूप अपने अन्दर के वे स्थान हमारे सामने उजागर होने लगते हैं जो मोक्षप्राप्ति के इस लक्ष्य के साथ एकलय नहीं हैं।

इस ललक को कैसे विकसित किया जा सकता है? मुक्त होने का दृढ़निश्चय, इस इच्छा के रूप में व्यक्त हो सकता है कि अपने आपको उन आध्यात्मिक अभ्यासों के प्रति समर्पित कर दिया जाए जो मुक्ति तक ले जाते हैं। ध्यान में हमारी रुचि बढ़ने लगती है, दिव्य नामसंकीर्तन के माधुर्य में हमें रस आने लगता है और हम प्रसन्नतापूर्वक मन्त्र-जप करने लगते हैं। सत्य के ज्ञाताओं के ज्ञानपूर्ण वचनों का अध्ययन करने और महात्माओं के दर्शन पाने के लिए हम परिश्रमपूर्वक प्रयत्न करते हैं। हम अपने जीवन के अनुभव पर गहराई से चिन्तन-मनन करते हैं और अपनी सच्ची योग्यता को पुनः खोज लेते हैं। जीवन से भागने के बजाय हम यह समझ जाते हैं कि जो कुछ भी हमारे समक्ष आता है, उसमें चिति को पहचानने व हर परिस्थिति से सीखने की हमारी क्षमता में ही स्वतन्त्रता या मुक्ति निहित है; और ऐसा करना हमें उत्साह व पराक्रम से भर देता है। हम समझ जाते हैं कि जीवन की कठिनाइयों का सामना करने और

उनसे गुज़रने से हम स्वतन्त्रता की अपनी अनुभूति का विकास कर पाते हैं। हम बड़ी तत्परता से, विभिन्न तरीक़ों द्वारा स्वयं को उसके साथ संलग्न करते हैं जो हमें सत्संग के समीप लाता है, हमें अन्तर में 'परम सत्य' के साथ एकरूप कर देता है।

अपनी दिव्यता के अभिज्ञान में प्रतिष्ठित हो जाने की हमारी यात्रा प्रयत्न, पराक्रम, और जैसा कि गुरुमाई जी कहती हैं, बलिदान की माँग करती है। तथापि, मुक्ति की इस ललक का प्रबल आवेग आनन्द से भरा है और यह अनन्त सम्भावनाओं के एक रोमांचक भाव को उत्पन्न करता है। जैसे-जैसे हमारे हृदय में मुमुक्षुत्व बढ़ता जाता है, हममें सच्ची दृढ़ता और साहस का विकास होता जाता है। मुक्त होने का यह साहसपूर्ण आवेग, अपने आपमें, बल के एक स्रोत की भाँति कार्य करता है।

---

[१] विवेकचूडामणि ३, अंग्रेज़ी भाषान्तर ©२०१८ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®।

[२] गुरुमाई चिद्विलासानन्द, प्रशान्ति से स्पन्दित : दैनिक चिन्तन [चित्शक्ति पब्लिकेशन्स, चेन्नई, २०१४], ४ मई।

©२०२१ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।